Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 5 | ISSN : 2581- 6306

पाश की कविता में सामाजिक चेतना

डॉ अर्चना त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर, डॉ भीमराव अंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

Article Info
Volume 3, Issue 5
Page Number : 332-339
Publication Issue :
September-October-2020
Article History
Accepted : 20 Sep 2020
Published : 30 Sep 2020

सारांश- पाश की अधिकांश कविताएँ सच्चाई और बगावत का ऐलान करती हैं और शोषक वर्गों को एक चुनौती देती हैं कि उनकी पराजय निश्चित है, हर तरह के अत्याचार न उनकी पराजय को रोक सकते हैं और न ही क्रांति की संभावना को मिटा सकते हैं। 'सच' कविता में वे घोषणा करते हैं कि शोषक वर्ग इस सच को स्वीकार करे, न करे, लेकिन अब संघर्ष का सच युग-सत्य बन रहा है। 'समय कोई कुत्ता नहीं' कविता में वे कहते हैं कि वे जेल में बंद होकर भी आज़ाद हैं, जबकि यह पहरेदार सदियों से बाहर रहकर भी कैद है।

मुख्य शब्द- पाश, कविता, सामाजिक, संघर्ष, मनुष्य।

"फूल शाखों पर खिलने लगे, तुम कहो
जाम रिंदों को मिलने लगे, तुम कहो
चाक सीनो में सिलने लगे, तुम कहो
हल खुले झूठ को, जेहन की लूट को
मैं नहीं जानता, मैं नहीं जानता
तुमने लूटा है सदियों हमारा सुकूँ
अब नहीं चलेगा तुम्हारा फसूं
चारागर मैं तुम्हें किस तरह से कहूँ?
तुम नहीं चारागर, कोई माने मगर
मैं नहीं मानता, मैं नहीं जानता"[1]

पाश का अक्स सामने आते ही हबीब जालिब की ये पंक्ति दिलो-दिमाग में गूँजती रहती हैं। पाश समझौतावादी तथा सबकुछ लिखते हुए भी अनजान बने रहने वाले कवि नहीं थे। एक हुंकार उनके कविताओं में सोती जनता को जगाने का काम करती है, तब भी, आज भी और आगे भी।

मनुष्य की स्वतंत्रता को दरकिनार उसके मौलिक अधिकारों को छीनकर उसकी आवश्यकताओं की अवहेलना कर उसके समझ राष्ट्रीय एकता जैसे खोखले नारे परोसना पाश को कतई पसंद नहीं। पाश के लिए देश का अर्थ केवल एक भूखंड

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

अथवा किसी प्रकार की भौगोलिक या राजनीतिक अखंडता नहीं। उनकी समझ में ऐसी अखंडता का नारा तब पूर्णतः अर्थहीन हो जाता है जब इस नारे की फिज़ा में जीने वाले इंसान की नियति ताउम्र पेट की समस्या से जूझना है, इसलिए वे लिखते हैं-

"भारत—

मेरे सम्मान का सबसे महान शब्द

जहां कहीं भी प्रयोग किया जाए

बाकी सभी शब्द अर्थहीन हो जाते हैं

इस शब्द के अर्थ

खेतों के उन बेटों में हैं

जिनके पास,सिवाय पेट के कोई समस्या नहीं

....

जब भी कोई समूचे भारत की

'राष्ट्रीय एकता की बात करता है

तो मेरा दिल चाहता है –

उसकी टोपी हवा में उछाल दूँ।"[2]

कवि के हृदय में अथाह प्यार है। लेकिन वह प्यार अर्थहीन नारों, मनुष्य को मनुष्य से दूर करती धरती की राजनीतिक विडंबनओं के प्रति नहीं बल्कि मनुष्यता के प्रति है। कितनी पीड़ा भोगी होगी कवि को जब उसे लिखना पडा होगा—

"अपने लोगों से प्यार का अर्थ

दुश्मन देशों का एजेण्ट होना होता है"[3]

इन दो पंक्तियों से न केवल उनके भीतर का मानव-प्रेम बल्कि राष्ट्रवादी कहलाने की छटपटाहट भी स्पष्ट झलकती है, जबकि वे देख रहे है कि राष्ट्रवादी कहलाने का अधिकार केवल उन्हें है जो "राष्ट्र" की परिभाषा को समझने में असमर्थ हैं—

और(इस देश में)

ज्यादा से ज्यादा गद्दारी का अर्थ

बड़े से बडा तमगा हो सकता है।[4]

कवि की सत्रह से वर्ष की आयु से लेकर सैंतीस वर्ष की आयु तक अर्थात किशोरावस्था से लेकर संपूर्ण यौवन तक लिखी कोई भी कविता रोमांटिक नहीं। यहाँ तक कि अपने हम उम्रों का आह्वाहन करते हुए किशोर कवि-पाश कविता 'खुला खत' में कहते हैं –

"प्रेमिकाओं को पत्र लिखने वालों

यदि आपकी कलम की नोक बांझ है

तो कागजों का गर्भपात न करो

यह युग वारिस

(हीर-रांझा के प्रेम कथा के रचनाकार)

का युग नहीं वियतनाम का युग है

हर क्षेत्र में

हक़ों के संग्राम का युग है।"[5]

पाश नक्सलवादी थे–घोषित नक्सलवादी–स्वयं द्वारा घोषित भी और पुलिस द्वारा भी। लेकिन "बीच का रास्ता नहीं होता" की रचनाएं पढ़कर लगता है कि कहीं कोई बहुत बड़ी गलती है..........सही वह है जो हम सोचते है,या यूं कहें कि व्यवस्था जो बताती है वह निश्चय ही गलत हैं।.. ..... बस ये कविताएँ जो जनपीड़ित,जनशोषण की सबसे बड़ी गवाह हैं, यहाँ पर ये कविता......." काँटो का जख्म में" कवि पाश कहते हैं–

"उसके घर से कुएँ तक का रास्ता

अभी भी सजीव है

लेकिन अनगिनत कदमों के निशान दब गए हैं

वह बहुत देर तक जीता रहा

ताकि उसका नाम रह सके"[6]

जनशोषण का एक नमूना इस भाव में दिखता है। ये कविताएँ - जो हत्यारों की ओर, शोषकों की ओर सीधी उँगली उठाती हैं- देशद्रोही कैसे हो सकती है? और यदि वह सचमुच ही नक्सलवादी है - जैसा कि व्यवस्था कहती है जैसा कि वह स्वयं कहता है तो फिर सोचना पड़ेगा कि नक्सलवाद को "देशद्रोही" कहा जाये तो क्यों?

कवि "कातिल" में कहता है–

मुझे देशद्रोही भी कहा जाता है

लेकिन मैं सच कहता हूं, यहदेश अभी मेरा नहीं है

यहाँ के जवानों और किसानों का नहीं है

और हम अभी आदमी नहीं हैं-बड़े निरीह पशु हैं।"

निरीह वर्ग के पक्ष में सीना तानकर खड़ी ये कविताएँ "शोषण" का लगातार मुँह चिढ़ाती दिखाई देती हैं।जेल के कोठरी में,हाथों में हथकड़ियां पहने,कविता "हाथ" लिखते हुए कवि को देखकर पाठक का शीश श्रद्धा से झुक जाता है और वह सोचने को विवश हो जाता है कि क्या सचमुच 1947 बीत चुका है और यदि बीत चुका है तो हमारा अपना सत्य का सूरज कैद क्यों?

"हाथ यदि हो तो

जोड़ने के लिए ही नहीं होते

न दुश्मन के सामने खड़े करने के लिए ही होते हैं

यह गर्दन मरोड़ने के लिए भी होते हैं।

....

हाथ श्रम करने के लिए ही नहीं होते

शोषक हाथों को तोड़ने के लिए भी होते है..........[7]

सममुच पाश की कविताएँ जनसंघर्ष की चेतना की अभिव्यक्ति हैं। ये बातें तब और स्पष्ट हो जाती है जब “कातिल” में वे कहते हैं–

“मेरी ओर देखो मैं अब भी जिंदा हूं

क्यों ठिठकते हो, आओ उठें

नदियां की तरह आगे बढ़े

मगरमच्छों के दांत तोड़ दें.........[8]

पाश का स्वर नकारवादी नहीं है बल्कि परिवर्तन की भावना से प्रेरित गतिशील है। यह नवप्रगतिशील चिंतन की पहली आवश्यकता है। व्यवस्था के खिलाफ लड़ते हुए खुद को संघर्ष में लगभग झोंकते हुए पाश देश की त्रासद स्थिति से नाखुश हैं और दु:खी भी।

जिनके लिए लडा मरा वहीं अंत में साथ नहीं दिया, 'बेदखली के लिए विनयपत्र' में पाश कहते हैं-

मैंने उम्रभर उसके खिलाफ सोचा और जिया है

मगर उसके अफसोस में पूरा देश ही शामिल है

तो इस देश से मेरा नाम खारिज कर दें.............[9]

मानवीय धरातल पर रोष पीडा की पहचान करने वाला कवि कब तक चुप-चुप सुनता रहेगा, वह इस पीडित इंसान की दर्द भरी आवाज से तिलमिला उठता है और कहने के लिए बाध्य हो जाता है।

“मैं पूछता हूं” कविता में पाश कहते हैं

“मैं पूछता हूं आसमान में उड़ते हुए सूरज से

क्या वक्त इसी का नाम है

कि घटनाएँ कुचलती चली जाएं

मस्त हाथी की तरह

एक समूचे मनुष्य की चेतना को?

कि हर सवाल

केवल परिश्रम करती देह भी गलती ही हो?

क्यों कहा जाता है हम जीते हैं

जरा सोचें ! हमसे से कितनी का नाता है

ज़िंदगी जैसे किसी चीज़ के साथ”[10]

पाश की कविता और ज़िंदगी यह नहीं कहती है कि आतंकवाद से डरकर कलम और मुँह पर ताले लगा लिये जाये। पाश अपने कदमों के जो निशान छोड़ गए हैं वे हमसे बेखौफ होकर चलते रहने के सिवा कुछ नहीं कह सकते।

कविता और जीवन के प्रति प्रतिबद्ध पंजाबी के इस बेजोड़ कवि को याद करते समय लेव तालस्ताय का कथन याद आता है,उन्होने फयोदोर दोस्तोएव्स्की के बारे में कहा था–“ मेरा जितना जी चाहता है कि उसके बारे में मैं जो महसूस करता हूँ,

बयान करूँ .... मैं उससे कभी नहीं मिला और न ही उसने मेरा अभी कोई सम्पर्क रहा लेकिन उसके मर जाने के बाद मेरी समझ में आया कि वह मेरे कितने निकट,कितने प्रिय और मेरे लिए कितने आवश्यक व्यक्ति थे.......मैं उन्हें मेरा मित्र समझता था और मैंने सोचा था संयोग की बात है कि मैं उनसे अब तक नहीं मिल पाया,पर कभी न कभी अवश्य मिलूँगा।"[11] ये बात पाश पर लागू करके देखें तो वो आज भी जिन्दा हैं ,अपनी चेतनामयी कविताओं के साथ, जो कि घायल समय के लहू से लिखी गई क्रांति की इबारत है। वे कहते है–

" युद्ध हमारे लहू और हड्डियों से
शुष्क आंधी की तरह गुजरेगा
सब कुछ अपना रंग छोड़ता
और बेसब्री से वर्षा के लिए तड़पता हुआ
युद्ध के जख्मों से हम खिले हुए फूलों को
महसूस करना सीखेंगे

....

तब एक नया युद्ध शुरू होगा
खुशगवार मौसम के लिए "[12]

'हाथ; कविता की तरह उनकी 'प्रतिबद्धता' कविता भी है, जिसके सच के आंच में प्रतिबद्धता के नाम पर लिखी बहुतेरी कविताएँ राख होती दिखाई देती हैं। पाश बिबों के भाषा में सोचते और गाते हुए भी सबकुछ 'सचमु" का ही चाहता है–

"हम झूठ-मूठ का कुछ भी नहीं चाहते
और हम सबकुछ सचमुच का देखना चाहते हैं
ज़िंदगी, समाजवाद या कुछ और..........."[13]

इसी तरह पाश की अधिकांश कविताएँ सच्चाई और बगावत का ऐलान करती हैं और शोषण वर्गों को एक चुनौती देती हैं कि उनकी पराजय निश्चित है, हर तरह के अत्याचार न उनकी पराजय को रोक सकती हैं और शांति के संभावना को मिटा सकते है। 'सच' कविता में वे घोषणा करते हैं कि शोषक वर्ग इस सच को स्वीकार करें या न करें,लेकिन अब संघर्ष का सत्य, युग-सत्य बन रहा है। "समय कोई कुत्ता नहीं" कविता में पाश कहते हैं कि वे जेल में बंद होकर भी आजाद हैं, लेकिन ये पहरेदार सलाखों के बाहर होकर भी कैद हैं। "आप हैरान क्यों हों" कविता में शोषक वर्ग को सीधे संबोधित करते हुए पाश कहते हैं वे तो सरफरोश है और उनसे हिसाब चुकता करेंगे। इस कविता में पाश ने उन यंत्रणाओं का काव्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है जो उन्होंने पुलिस के हाथों 1969 में झेली। "प्रतिज्ञा" कविता में शोषक वर्गों को समाप्त करने की प्रतिज्ञा व्यक्त हुई है।

"कातिल" "खुला खत" "कागजी शेरों के नाम" आदि कविताएँ मध्यवर्ग व बुद्धिजीवियों के नाम संबोधित हैं। उनके खोखलेपन से उद्घाटित करते हुए संघर्ष में कूदकर अपना व्यक्तित्व हासिल करने की अपेक्षा इन कविताओं में व्यक्त हुई है। "शोक समारोह में" कवि पाश एक शोषित का चित्र इस तरह खींचते हैं अपनी कविता के माध्यम से जीवंत चित्रण करते हैं–

"दाढ़ी में सूख गए आंसू के मातम में

आयें दो पल के लिए मौन खड़े हो जाएँ

और जरा सोचें

इस बूढ़े ने ज़िंदगी को

गुड़ की डली की तरह कल्पित किया होगा

लेकिन उम्र भर नजरों से

प्याज का विंब नहीं तोड़ सका"[14]

पाश के कविताओं को देखकर नि:सन्देह कहा जा सकता है कि ये जनवादी रचना करते रहे, अर्थात जनवादी साहित्य को जीवनपर्यंत महत्व देते रहे। जनवादी साहित्य मुट्ठी भर शोषक-शासक वर्ग के प्रति विशाल शोषित जन-समुदाय की मुक्ति का उद्घोष है। जनवादी काव्य के बारे में डॉ. शिव कुमार मिश्र का कहना है-" जनवादी कविता का आधार किसी राष्ट्र या देश की जनता का मुख्य जीवन प्रवाह होता है और इस जनता के अंतर्गत किसी राष्ट्र या देश के निवासियों का मुख्यांश आता है जो समाज के प्रभु वर्गों के विपरीत अपनी जीविका का निर्वाह करता है। यह श्रम शारीरिक भी होता है और मानसिक जनवादी कविता जनता की ज़िंदगी के बीच में उगते हुए उसकी आशाओं, आकांक्षाओं उसके स्वप्नों तथा संघर्षों को वाणी देता है।" [15]

जनवादी साहित्य के पूरे फ्रेम में पाश की कविता को हम फिट देखते हैं जब वो कहते है कि–

" हम लड़ेंगे साथी उदास मौसम के लिए

हम लड़ेंगे साथी, ग़ुलाम इच्छाओं के लिए

हम चुनेंगे साथी, ज़िंदगी के टुकड़े

हथौडा अब भी चलता है

उदास रिहाई पर

हल की लीकें

अब भी बनती है

सवाल के कंधो पर चढ़कर

हम लड़ेंगे साथी..........[16]

पाश की अंतिम प्रकाशित कविता थी "सबसे ख़तरनाक"। इस कविता में पाश ने इंसान का प्रतिरोध करने, जीने और उसके सपनों के मर जाने की स्थिति को शोषण, दमन और अत्याचार से भी ख़तरनाक माना है। आकस्मिक नहीं कि पाश ने स्वयं अपने बलिदान द्वारा इस "सबसे ख़तरनाक" स्थिति को भेद दिया-

"सबसे ख़तरनाक होता है

मुर्दा शांति से भर जाना

न होना तड़प का सब सहन कर जाना

घर से निकलना काम पर

और काम से लौटकर घर आना

सबसे ख़तरनाक होता है

हमारे सपनों का मर जाना"[17]

सपने में जिंदा रखने की लड़ाई पाश के कविताओं में अधिक दिखाई पड़ती है। जनसंघर्ष का रूप साफ दिखाई पड़ता है। "ज़िंदगी की आँखों में आँख डालकर बातें करते" पाश के लिए कविता न शब्द हिलोल थी, न यथार्थ की अभिव्यक्ति का जरिया, वे तो समकालीन यथार्थ को समझने समझाने के लिए कविता को क्रांतिकारी औजार में बदलने के लिए चितांतुर थे। उन्हें कविता से बहुत बड़ी उम्मीद थी। पाश ने कविता को खामोश होने से बचाया। सरकारी और खडाकू आतंक के दिनों में भी उन्होनें "धर्मदीक्षा के लिए विनयपत्रिका" तथा " बेदखली के लिए विनयपत्र" जैसी बुलंद आवाज कविताएँ लिखीं, पाश की कविता लोहे के जंजीरों और लोहे के हथियारों से अधिक ख़तरनाक थी– इस सच्चाई को उनके विरोधी अच्छे तरह जानते थे। शायद इसलिए उन्होनें "लोहे की कविता" का लोहे के हथियारों के साथ सम्मान किया। पाश अपनी होनी से बेख़बर नहीं थे। उन्होंने खुद कहा था – युग को पटलने में मशरूफ़ लोग बुखार से नहीं मरते, अपने हिस्से की कटार उन्होनें खुद मांगी। पाश नहीं रहे, पर उनकी कविता "धर्मपुत्र" नापाक सियासत का मुँह चिढ़ाती रहेगी, चुप हो गए पाश की कविता आज अधिक मुखर हो गई हैं–

"सबसे ख़तरनाक वह चाँद होता है

जो हर हत्याकांड के बाद

सुन्न हुए आंगन में चढ़ता है

पर तुम्हारी आँख में मिर्च की तरह नहीं लड़ता।"

पाश का विश्वास था कि जन–जन में व्याप्त रोष को हथियारबंद संघर्ष से जोड़कर ही इतिहास की नई पगडंडियो की तामीर की जा सकती है, विचारधारा की स्पष्टता इसकी पहली शर्त है। जरुरी है कि बुर्जुआ वर्ग के सभ्याचार ढ़ाँचे को गिराया जाए। उस पर हमला किया जाए। इसके लिए कला सबसे कारगर हथियार हो सकते है। फलतः पाश ने न केवल खुद कलम और अमल के धरातल पर जिहाद छेड़ा बल्कि समकालीन बुद्धिजीवियों को मच्छरदानी से बाहर आकर विचारों की लड़ाई लड़ने के लिए लिए प्रेरित किया। जनसंघर्ष भी चेतना से ओत–प्रोत अपने प्रथम काव्य संग्रह में ही पाश रह उठते हैं–

"मैं हालात से समझौता करके

घिसट कर जीना नहीं चाहता

मेरे यारों!

मुझे इस कत्लेआम में शामिल होने दो

मौत के कंधों पर जाने वालों के लिए

मौत के बाद जिंदगी का सफर शुरू होता है।"[18]

हालात से समझौता करना पाश होना नहीं है, न ही समाज का बदला हुआ रूप। पाश जनसंघर्ष की चेतना से प्रभावित होकर "कामरेड से बातचीत" में लिखते हैं–

"यह वक्त बहुत ख़तरनाक है साथी !

कि महान एंगेल्स की बात 'परिवार' व्यक्तिगत संपत्ति

और राज्य'

हमने एक साथ पढ़ी थी

....

राज्यसत्ता की तरह मुकाबला करते हुए

'परिवार' शब्द से अर्थ के खत्म हो जाने को

रोकता रहा............।[19]

यह राजनीति की कोरी बहस नहीं, बल्कि संघर्षों के बीच पकते हुए कवि का अनुभव है। मुक्तिबोध के शब्दों में 'संवेदनात्मक ज्ञान' या कि 'ज्ञानात्मक संवेदन'।

अंत में हम कह सकते हैं कि पाश की अधिकांश कविताएँ सच्चाई और बगावत का ऐलान करती हैं और शोषक वर्गों को एक चुनौती देती हैं कि उनकी पराजय निश्चित है, हर तरह के अत्याचार न उनकी पराजय को रोक सकते हैं और न ही क्रांति की संभावना को मिटा सकते हैं। 'सच' कविता में वे घोषणा करते हैं कि शोषक वर्ग इस सच को स्वीकार करे, न करे, लेकिन अब संघर्ष का सच युग-सत्य बन रहा है। 'समय कोई कुत्ता नहीं' कविता में वे कहते हैं कि वे जेल में बंद होकर भी आज़ाद हैं, जबकि यह पहरेदार सदियों से बाहर रहकर भी कैद है। सवाल यह है कि इस आज़ादी से बाहर कैसे आया जाय, जो कि उस समय का एक सवाल था और आज भी...

संदर्भ-सूची

1. हबीब जालिब ,समकालीन जनमत पृ0सं0- 41
2. अवतार सिंह पाश "संपूर्ण कविता" पृ0सं0- 37
3. अवतार सिंह पाश "लहू है कि तब भी गाता है।"
4. अवतार सिंह पाश "लहू है कि तब भी गाता है।"
5. अवतार सिंह पाश "लहू है कि तब भी गाता है।" पृ0सं0-152
6. अवतार सिंह पाश "बीच का रास्ता नहीं होता पृ0सं0-101
7. अवतार सिंह पाश "लहू है फिर भी गाता है" पृ0सं0-149
8.. वहीं पृ0सं0-115
9. अवतार सिंह पाश "संपूर्ण कविता" पृ0सं0- 198 -199
10. वहीं पृ0सं0-77
11. अवतार सिंह पाश "वर्त्तमान के रुबरु" पृ0सं0-87
12. अवतार सिंह पाश "संपूर्ण कविता" पृ0सं0- 241
13. अवतार सिंह पाश "लहू है फिर भी गाता है" पृ0सं0-60
14. अवतार सिंह पाश "बीच का रास्ता नहीं होता" पृ0सं0-162
15. डॉं अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली , पृ0सं0-225-226
16. अवतार सिंह पाश "लहू है फिर भी गाता है" पृ0सं0-110
17. अवतार सिंह पाश "संपूर्ण कविता" पृ0सं0- 200
18.पल-प्रतिपल ,अक्टू-1997,पृ0 सं0 161
19.. अवतार सिंह पाश "बीच का रास्ता नहीं होता" पृ0सं0-166